समीर सिंह और अन्य

वी.अब्दुल राब और अन्य

(2014 की सिविल अपील संख्या 9699)

14 अक्टूबर, 2014

[दीपक मिश्रा और वी. गोपाल गौड़ा, जे. जे.]

भारत का संविधान, 1950:

अनुच्छेद 227 न्यायालय के आदेश को निष्पादित करने का दायरा निष्पादन न्यायालय के आदेश 21 नियम 97 , 99 और 101 के तहत इस आधार पर बनाए रखने योग्य नहीं है कि उक्त न्यायालय बन गया था फंकटस ऑफिसियो-उक्त आदेश/डिक्री का दर्जा अर्जित नहीं किया जा सकता है क्योंकि कोई निर्णय नहीं हुआ है-यदि कोई अधीनस्थ न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है जो कानून द्वारा उसमें निहित नहीं है या विफल रहता है इस प्रकार निहित अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए, इस तरह के आदेश पर सी. पी. सी. की धारा 115 के तहत और डब्ल्यू. ई. एफ. 1.7.2002 संशोधन के बाद पुनर्विचार किया जा सकता है। उक्त शक्ति का प्रयोग अनुच्छेद 227 के तहत किया जाता है। याचिकाकर्ताओं ने अनुच्छेद के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का उचित रूप से उपयोग किया गया। निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर हमला

करना इस आधार पर कि यह निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा था इसमें-सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 s.115।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908:

ओ. 21, नियम 99 103-एकतरफा डिक्री का निष्पादन-निष्पायन न्यायालय की शक्ति-दावा करने वाले अजनबी द्वारा दायर आवेदन संपत्ति जो निष्पायन कार्यवाही की विषय वस्तु है, में अधिकार, स्वामित्व और हित का दावा करता है। निष्पादन न्यायालय के पास संपत्ति में अधिकार, स्वामित्व या हित से संबंधित सभी प्रश्नों पर निर्णय लेने का अधिकार है। जो पक्षों के बीच उत्पन्न होते है वह दावा भी शामिल है। जो एक अजनबी जो बेदखल होने की आशंका रखता है या पहले से ही है अचल संपत्ति से बेदखल कर दिया गया।

अपील को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

पकड़नाः 1.1 . निष्पादन न्यायालय के पास अधिकार, स्वामित्व या हित से संबंधित सभी प्रश्नों पर निर्णय लेने का अधिकार है। जो पक्षों के बीच उत्पन्न होते है। इसमें एक अजनबी का दावा भी शामिल है जो अचल सम्पत्ति से बेदखल या पहले से ही बेदखल कर दिया गया है स्व-निहित कोड, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया है, निष्पादन का आदेश देता है न्यायालय उसका न्यायनिर्णयन करेगा और इसका उद्देश्य कार्यवाही की बहुलता से बचना है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि 1976 के संशोधन से पहले शिकायत की आवश्यकता थी मुकदमा दायर करके क्षुब्ध हुए लेकिन

संशोधन के बाद पूरे जाँच निष्पादन न्यायालय द्वारा की जानी चाहिए। [पैरा 21] [1018-एफ-एच; 1019-ए]

बाबूलाल वी. राज कुमार कुमार और अन्य 1996 (2) एस. सी. आर. 763 = 1996 (3) एस. सी. सी. 154; घासी राम और अन्य बनाम। चैत राम सैनी और अन्य 1998 (3) एससीआर 863 = 1998 (6) एस. सी. सी. 200 और राम कुमार तिवारी और अन्य बनाम। दीनानाथ और अन्य एआईआर 2002 छत्तीसगढ़ 1; एस. राजेश्वरी बनाम। एस. एन. कुलशेखरन और अन्य 2006 (3) एससीआर 610 = 2006 (4) एस. सी. सी. 412; नूरदुद्दीन बनाम। डॉ. के. एल. आनंद 1994 (4) पूरक। एस. सी. आर. 322 = 1995 (1) एस. सी. सी. 242; भंवर लाल बनाम। सत्यनारायण और एक अन्य 1994 (4) पूरक। एससीआर 208 = 1995 (1) एससीसी 6; ब्रह्मदेव चौधरी बनाम। ऋषिकेश प्रसाद जयस्वाल और एक अन्य 1997 (1) एससीआर 463 = 1997 (3) एससीसी 694 -संदर्भित किया गया।

आदेश 21 का नियम 103, सी. पी. सी. स्पष्ट रूप से निर्धारित करता है कि जब नियम 100 और 98 के तहत एक आवेदन पर निर्णय लिया जाता है तो उक्त आदेश का वही बल होगा जैसे कि वह था एक डिक्री हो। इस प्रकार, यदि कोई अदालत इस आधार पर निर्णय देने से इनकार करती है कि उसके पास क्षेत्राधिकार नहीं है उक्त आदेश एक डिक्री का दर्जा अर्जित नहीं कर सकता है। तत्काल मामले में, निष्पादन अदालत ने एक राय

व्यक्त की कि यह कार्यात्मक अधिकारी बन गया है और, इस प्रकार, यह कोई जांच शुरू या शुरू नहीं कर सकता है।

अपीलकर्ताओं ने भारतीय संविधान के अनु0 227 के तहत उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र का उचित रूप से आह्वान किया था कि निष्पादन न्यायालय अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा था। [पैरा 21] [1019-ए-डी]

1.3 चाहे निष्पादन न्यायालय, ने इन प्राप्त करने में परिस्थितियों में सही दृष्टिकोण व्यक्त किया है कि यह अधिकार हीन हो गया है या नहीं और इस प्रकार इसका अधिकार क्षेत्र है या नहीं, मूल रूप से सुधार से संबंधित है एक अधिकार क्षेत्र की त्रुटि के सुधार से संबंधित है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कोई निर्णय नहीं हुआ है। यदि कोई अधीनस्थ न्यायालय ऐसे अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है जो कानून द्वारा इसमें निहित अधिकार क्षेत्र नहीं है या इस तरह से निहित अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहता है, संहिता की धारा 115 के तहत उक्त आदेश पुनर्विलोकन योग्य है। एस के संशोधन के बाद। 115 , सी. पी. सी. डब्ल्यू. ई. एफ. 1.7.2002, उक्त शक्ति का प्रयोग अनुच्छेद 227 के तहत किया जाता है।[पैरा 22] [1019-ई-एफ; 1020-ए]

सूर्य देव राय बनाम। राम चंदर राय और अन्य 2003 (2) पूरक। एससीआर 290 = 2003 (6) एससीसी 675; जॉय चंद लाल बाबू वी कमलाक्षा चौधरी और अन्य आकाशवाणी 1949 पीसी 239 ; केशरदेव

चामरिया बनाम। राधा किसान चामरिया और अन्य 1953 एससीआर 136 = एआईआर 1953 एससी 23 और चौबे जगदीश प्रसाद और एक अन्य वी। गंगा प्रसाद चतुर्वेदी 1959 पूरक। एस. सी. आर. 733 = ए. आई. आर. 1959 एस. सी. 492-पर निर्भर।

1.4 उच्च न्यायालय ने अपनी राय में गलती की है कि निष्पादन न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय एक डिक्री है और इसलिए, एक अपील दायर की जानी चाहिए थी। विवादित आदेश को अपास्त कर दिया जाता है। उच्च न्यायालय अनुच्छेद 227 के तहत आवश्यकतानुसार मामले का निर्णय लें। 227 संविधान से। [पैरा 23] [1020-सी-डी]

मामला कानून संदर्भः

1996(2)एससीआर 763 संदर्भित किया गया है पैरा 11

1998 (3) एससीआर 863 संदर्भित किया गया है पैरा 11

ए. आई. आर 2002 छत्तीसगढ़ संदर्भित किया गया है पैरा 11

समीर सिंह वी. को संदर्भित किया गया। अब्दुल राब 1007

2006(3)एससीआर 610 संदर्भित किया गया है पैरा 12

1994 (4) पूरक। एस. सी. आर. 322 को संदर्भित किया गया पैरा 16

1994 (4) पूरक। एस. सी. आर. 208 को संदर्भित किया गया पैरा 17

1997 (1) एससीआर 463 संदर्भित किया गया है पैरा 20

2003 (2) पूरक। एस. सी. आर 290 पर निर्भर पैरा 22

ए. आई. आर 1949 पी. सी. 239 उस पर भरोसा करें पैरा 22

1953 एससीआर 136 उस पर भरोसा करें पैरा 22

1959 पूरक। एससीआर 733 उस पर भरोसा करें पैरा 22

सिविल अपीलीय न्यायनिर्णयः सिविल अपील सं 9699/2014 से।

डब्ल्यू. पी. सी. में 22.06.2011 दिनांकित निर्णय और आदेश से रांची में झारखंड उच्च न्यायालय की 2011 की सं. 348।

सौरभ एस. सिन्हा, अरिजीत मजूमदार, अभिनव मुखर्जी याचिकाकर्ता।

जयेश गौरव, अमरेंद्र के. सिंह, टी. महिपाल उत्तरदाता।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था

दीपक मिश्रा, जे. 1. छुट्टी दे दी गई।

2. सार्वभौमिक निर्माण कंपनी, प्रतिवादी इसमें सं. 3,ने कलकत्ता उच्च न्यायालय में 1971 का सिविल सूट सं. 480 दायर किया गया। कलकत्ता का न्यायालय अपने मूल सिविल अधिकार क्षेत्र का आह्वान कर रहा है इंजीनियरों से 2,15,289.28 पैसे की राशि की प्राप्ति सिंडिकेट

(इंडिया) प्राइवेट लिमिटेड, इसमें चौथा प्रतिवादी,एवं इसमें एकपक्षीय डिक्री पारीत की गयी अब्दुल रब, प्रतिवादी संख्या 1,20 मई, 2005 को। इसके बाद कार्य के विलेख को औपचारिक रूप दिया गया था, पहला प्रत्यर्थी संख्या 1 ने कलकत्ता उच्च न्यायालय का रुख किया और उक्त 1008 सर्वोच्च न्यायालय रिपोर्ट [2014] 10 एस. सी. आर. प्राप्त की।

निष्पादन न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में स्थित चौथे प्रतिवादी की अचल संपत्तियों की कुर्की और बिक्री के माध्यम से निष्पादन के लिए एक डिक्री को उच्च न्यायाधीश जमशेदपुर की अदालत में स्थानान्तरित कर दिया गया। इसके बाद, पहले प्रतिवादी ने चौथे प्रतिवादी के खिलाफ निष्पादन का मामला दर्ज किया। की एक अनुसूची निष्पादन याचिका के साथ संपत्ति संलग्न की गई थी।

3. जैसे ही तथ्यात्मक मैट्रिक्स सामने आएगा, निष्पादन अदालत 23.8.2006 पर डिक्री की प्राप्ति के बाद पंजीकृत डाक द्वारा चौथे प्रतिवादी को नोटिस जारी किया गया और कब सेवा दी गई थी प्रभावी नहीं हुई आदेशिका तब प्रकाशन के तरीके का सहारा लिया गया निर्णय की उपस्थिति-देनदार। आखिरकार, निष्पादन समनुदेशकर्ता-डिक्री-धारक की प्रक्रिया का पालन करने के बाद, याचिका पर 9.3.2007 पर एकतरफा सुनवाई के लिए मामला तय किया गया था अनुसूचित संपत्ति को नीलामी के माध्यम से बिक्री के लिए रखा गया था और अंततः प्रतिवादी संख्या 2,

अब्दुल रफई ने संपत्ति खरीदी और अदालत के आदेश के अनुसार उक्त अचल संपत्ति का कब्जा अपने हाथ में ले लिया।

4. जैसे-जैसे तथ्यात्मक वर्णन आगे बढ़ता जाएगा, उक्त समय पर, वर्तमान अपीलकर्ताओं ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XXI, नियम 97,99 और 101 के तहत एक आवेदन दायर किया जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह तर्क देते हुए कि विवादित संपत्ति मूल रूप से चौथे प्रत्यर्थी की थी जिसने एक उनके दिवंगत पिता गोपाल सिंह से Rs.14,571/- की राशि उधार लेकर कलकत्ता में 18.2.1971 पर उक्त संपत्ति के बिक्री विलेख जमा करना और उक्त संपत्ति के ब्याज के बदले में 19.2.1971 गोपाल सिंह को उक्त सम्पति पर कब्जा दे दिया जब वह उधार ली गई राशि का भुगतान करने में विफल रहा, तो चौथा प्रत्यर्थी ने 25000 रूप्ये के एवज में उक्त संपत्ति को हस्तांतरित करने पर सहमति व्यक्त की Rs.14,571/- को समायोजित करने के बाद शेष राशि 10429 का भुगतान किया था। Rs.10,429/- और तदनुसार बिक्री के लिए एक समझौता निष्पादित किया गया था। जब चौथे प्रतिवादी ने अनुबंध के अपने हिस्से का पालन नहीं किया, तो गोपाल सिंह ने चौथे प्रतिवादी के खिलाफ 1974 में शीर्षक मुकदमा संख्या 43 दायर किया उप न्यायाधीश के न्यायालय-1, जमशेदपुर में प्रत्यर्थी और अंततः उक्त वाद में 14.05.1977 को द्वितीय अतिरिक्त उच्च न्यायाधीश द्वारा फैसला सुनाया गया था इसके बाद, एक मामला दायर किया गया और डिक्री के अनुसरण में अपीलार्थियों के पिता के पक्ष में

10.10.1982 को एक विक्रय पत्र एक बिक्री विलेख था पर निष्पादित किया गया न्यायालय के माध्यम से और उसे विचाराधीन संपत्ति के संबंध में सिविल न्यायालय के नजीर के माध्यम से कब्जे में रखा गया था, गोपाल सिंह की मृत्यु, के बाद अपीलार्थी को पुत्र होने के नाते उक्त सम्पति विरासत में मिली और 27.04.2008 तक उक्त संपत्ति और अधिकार, स्वामित्व के साथ कब्जे में रही जब अचानक प्रतिवादी संख्या 2 ने नाजिर की मदद से सम्पति की सुपुर्दगी ले ली तथा अपीलार्थी को नाजीर द्वारा बेदखलक कर दिया गया आवेदन में आगे दावा किया कि सम्पति की अनुसूची जो पुछताछ करने के बाद उन्हें पता चला कि किन परिस्थितयिों में नाजिर ने उन्हें बेदखल कर दिया 2006 के निष्पादन मामला संख्या 24 में जोड़ा गया था जानबूझकर जोड़ा गया हालांकि चौथे प्रतिवादी को इससे कोई सरोकर नहीं था। उसी के साथ। यह भी बताया गया कि 1971 के वाद संख्या 480 में कलकत्ता उच्च् न्यायालय द्वारा अनुसूचित सम्पति के संबंध में एक स्थानीय दैनिक 'उदितवानी' में दिनांक 23.10.1982 को कुर्की का आदेश प्रकाशित किया गया था। अपीलार्थियों के पिता ने यह जानने के लिए कि उच्च न्यायालय के समक्ष आपत्ति दायर की गई थी जिसमें आपत्ति पर विचार करने और अपीलार्थियों के पिता के अधिकार, शीर्षक और हित पर ध्यान देने के बाद उक्त संपत्ति को कुर्की से मुक्त कर दिया लेकिन प्रथम प्रतिवारदी ने सभी तथ्यों को छिपाकर प्रापत कर लिया कुर्क की गई संपत्ति को नीलामी में डाल दिया गया और प्रतिवादी संख्या 2 जिसे प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा स्थापित किया गया था संपत्ति का खरीदार बन

गया। संक्षेप में यह दलील दी गई की प्रतिवादी संख्या 1 व 2 ने उस सम्पति को नीलामी में डालने के लिए मिलीभगत की थी जो प्रतिवादी संख्या 4 की नहीं थी और और कुर्की व बिक्री के लिये नही थी। क्योंकि यह कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा पहले ही जारी किया जा चुका था और, किसी भी मामले में,प्रतिवादी संख्या 4 को उक्त संपत्ति से कोई सरोकार नहीं था। आवेदन में यह प्रार्थना की गई थी कि अपीलार्थी, आवेदकों को निचली अदालत में, अनुसूचित संपत्ति का कब्जा दिया जाए और प्रत्यर्थियों को बदलने से रोका जाना चाहिए।

न्यायनिर्णयन तक संपत्ति की प्रकृति और चरित्र

5. उक्त आवेदन का निष्पादन न्यायालय के समक्ष प्रतिवादी संख्या 1 और 2 द्वारा विरोध किया गया था।

तथा विरोधी पक्ष संख्या 1 और 2 द्ववारा कई आधारों पर और विरोध किया गया था मूल रूप से तथ्यों को फिर से जोड़ते हुए कि कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा डिक्री कैसे पारित की गई थी और असाइनमेंट का एक विलेख कैसे हुआ संपत्ति की नीलामी में रखने और अन्ततः ब्रिकी में अपनाई गई प्रकिया की निष्पक्षता कैसे हुई 6. कार्यकारी निष्पादन अदालत ने दो मुद्दे तैयार किए जो इस प्रकार हैं - निम्नलिखित हैः

" 1. क्या अंतरिती कार्यकारी निष्पादन न्यायालय का अधिकार क्षेत्र है आवेदकों द्वारा दायर वर्तमान याचिका पर निर्णय लेने के लिए आदेश XXI नियम 97,99 और 101 सी. पी. सी. के तहत?

II. क्या आवेदक राहत पाने के हकदार हैं उनके आवेदन में दावा?

7. कार्यकारी अदालत ने दोनों पक्षों की दलीलों को गौर किया कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा निष्पादन के लिए डिक्री को स्थानांतरित करने के लिए पारित आदेश को संदर्भित करते हुए, सी. पी. सी. की धारा 39 से 42 के तहत प्रावधानों ने शक्तियों पर सीमा के संबंध में कुछ प्राधिकरणों पर निर्भरता रखी सी. पी. सी. की धारा 42 के तहत अंतरिती अदालत द्वारा अभिलिखित तथ्य यह है कि उसने पहले ही निष्पादन मामले को 19.12.2008 पर डिक्री-धारक की पूरी संतुष्टि के लिए खारिज कर दिया था और कलकत्ता उच्च न्यायालय के पंजीयक को इसकी सूचना दी गई और अंततः यह माना गया कि इसका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था किसी तीसरे पक्ष के कहने पर निष्पादन मामले में पक्षों के अधिकार से संबंधित मामले को फिर से खोलना और चर्चा करना। उस पृष्ठभूमि में, यह देखा गया कि निष्पादन न्यायालय कार्यात्मक अधिकारी बन गया था दूसरे मुद्दे पर,निष्पादन अदालत ने दलीलों को नोट किया और पहले उद्धृत अधिकारियों को संदर्भित किया लेकिन अंततः राय दी कि एक निष्कर्ष के रूप में इस प्रभाव से दर्ज किया गया था कि अंतरिती-कार्यकारी न्यायालय के पास याचिका पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था, इस

तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आदेश दिया गया था पूर्ण संतुष्टि के साथ निष्पादित किया गया और कलकत्ता उच्च न्यायालय के पंजीयक को एक सूचना भेजी गई थी, उठाए गए विवाद से निपटा नहीं जा सका और कोई राहत नहीं दी जा सकी।

8. उपरोक्त आदेश को डब्ल्यू.पी.सी. में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत 2011 के डब्ल्यू. पी. सी. सं. 348 में प्रथम प्रतिवादी की ओर से एक प्रारंभिक आपत्ति उठाई गई थी कि आदेश XXI, सी. पी. सी. के नियम 98 से 100 के तहत पारित आदेश प्रावधानों के अनुसार एक डिक्री है। सी. पी. सी. के आदेश XXI, नियम 103 के तहत निहित प्रावधानों के अनुसार एक डिक्री है और, इसलिए,एक अपील होगी और रिट याचिका सुनवाई योग्य नहीं थी। प्रारंभिक आपत्ति का विरोध एक तर्क द्वारा किया गया था यह तर्क कि केवल वे आदेश जो पक्षों के बीच विवाद का निर्णय करते हैं, उन्हें डिक्री के रूप में माना जाएगा, लेकिन जैसा कि इस मामले में, न्यायालय ने विचाराधीन मामले का फैसला नहीं किया था क्योंकि उसने यह राय व्यक्त की थी कि उसके बाद उसका कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था। कार्यात्मक अधिकारी बनने के बाद, एक अपील झूठ नहीं बोलेगी।

9. विद्वान एकल न्यायाधीश ने प्रारंभिक आपत्ति को स्वीकार कर लिया इस आधार पर स्वीकार कर लिया कि अदालत को निष्पादित करने के अधिकार क्षेत्र के संबंध में पक्षों के बीच विवाद सी. पी. सी. के

आदेश XXI, नियम 100 के तहत निर्धारित किया जा सकता है और यह कि जब उस अंक पर कोई निर्णय दिया गया था तो यह सी. पी. सी. के आदेश XXI, नियम 103 के तहत एक मानित डिक्री होगी और इसलिए, रिट याचिका सुनवाई योग्य नहीं था। उपरोक्त दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति के लिए रिट याचिका को खारिज करना आवश्यक था। अतः, द्वारा वर्तमान अपील विशेष अवकाश।

10. हमने अपीलार्थियों के विद्वान वकील श्री सौरभ एस. सिन्हा और प्रतिवादियों विद्वान वकील श्री जयेश गौरव को सुना है उत्तरदाताओं।

11. विवादित आदेश का हवाला देते हुए श्री सिन्हा ने तर्क दिया कि विद्वान एकल न्यायाधीश की सराहना करने में विफल रहे हैं। आदेश XXI, नियम 97 से 103 में प्रयुक्त भाषा जो निष्पादन न्यायालय को विवाद पर निर्णय लेने का आदेश देती है। सभी पहलुओं से संबंधित और, इसलिए, जब निष्पादन अदालत ने केवल यह राय दी है कि यह अधिकार विहिन हो गया है, उक्त आदेश को डिक्री के रूप में नहीं माना जा सकता है। उसके द्वारा निवेदन किया जाता है अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने से इन्कार करना जो न्यायक्षेत्र विधिवत न्यायालय में निहित है और इसलिए, इस तरह की त्रुटि को भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय द्वारा अधीक्षण की शक्ति का प्रयोग करते हुए ठीक किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय द्वारा व्यकत् किया गया दृष्टिकोण बाबूलाल बनाम राजकुमार व अन्य के मामले में निर्णय के अनुपात की समझ के संबंध में

भ्रामक है। इस दलील को सही ठहराने के लिए कि कानून के मुताबिक न्याय निर्णय होना चाहिए विद्वान अधिवक्ता ने घासीराम बाबूलाल बनाम राजकुमार व अन्य पर भरोसा जताया। बाबूलाल बनाम में निर्णय। राज कुमार और अन्य 1. पिरामिड के लिए प्रस्तुत करना कि एक निर्णय होना चाहिए जैसा कि वारंट किया गया है और अन्य वी दीनानाथ और अन्य 3.

12. श्री जयेश गौरव, उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश के समर्थन में प्रतिवादियों की ओर से पेश विद्वान अधिवक्ता यह तर्क दिया है कि जब निष्पादन अदालत ने स्पष्ट रूप से यह विचार व्यक्त किया कि आदेश XXI, नियम 97 से 103 सीपीसी के तहत जिन मुद्दों पर विचार करने की आवश्यकता है, उन्हें शुरू करने का न्यायालय को कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है आगे बढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं थी और यह न्याय का उपहास होगा यदि यह माना जाए कि कब एक तीसरा पक्ष की ओर से आवेदन का कोई निर्णय नहीं हुआ है यह एक डिक्री नहीं होगा। उनके द्वारा यह दावा किया गया है कि निर्णय का मतलब आवश्यक रूप से साक्ष्य दर्ज करना नहीं है और अधिकार, स्वामित्व और हित के मुद्दे से निपटने के लिए आदेश XXI, नियम 103 के तहत निर्धारित एक मानित डिक्री का आदेश दें उनके द्वारा यह आग्रह किया जाता है कि जब आपत्ति को अंतिम रूप दिया जाता है तो यह आदेश के तहत परिकल्पित डिक्री के रूप में माना जाता है। जैसा कि आदेश 21, नियम 103 में बताया गया और इसलिए, उच्च

न्यायालय द्वारा बताए गए कारण को दोष नहीं दिया जा सकता है। उनके तर्क के समर्थन में, विद्वान वकील ने एस. राजेश्वरी बनाम में एस. एन. कुलसेकरन और अन्य प्राधिकरण की सराहना की है।

1. (1996) 3 एससीसी 154।

2. (1998) 6 एससीसी 200।

3. ए. आई. आर 2002 छत्तीसगढ़ 1.

4. (2006) 4 एससीसी 412।

13. बार में उठाई गई दलीलों की सराहना करने के लिए, प्रावधानों के पूरे सरगम की जो सी. पी. सी. के आदेश XXI, नियम 97 से 103 में दिये गये की सराहना करना आवश्यक है और इसके पीछे जो मौलिक उद्देश्यों में निहित है। नियम 97 के बारे में कब्जे के लिए डिक्री के धारक या डिक्री के निष्पादन में बेची गई ऐसी किसी संपत्ति के खरीदार द्वारा कब्जे का प्रतिरोध या बाधा से संबंधित है यह ऐसे व्यक्ति को सशक्त बनाता है कि ऐसे प्रतिरोध या बाधा की शिकायत करते हुए न्यायालय में एक आवेदन दायर करें और उप-नियम (2) के तहत न्यायालय से आवेदन पर निर्णय लेने की अपेक्षा करें उसमें उपबंधित प्रावधान। नियम 99 डिक्री धारक या खरीदार द्वारा। विस्थापन से संबंधित है। यह निर्धारित करता है कि जहाँ कोई निर्णय के अलावा अन्य व्यक्ति-ऋणी को एक डिक्री के धारक द्वारा अचल संपत्ति से बेदखल कर दिया जाता है ऐसी संपत्ति का कब्जा या जहां ऐसी संपत्ति एक डिक्री के निष्पादन में बेची गई है, वह

उसके खरीदार द्वारा अदालत में ऐसी बेदखली की शिकायत करने के लिए आवेदन कर सकता है। वहां न्यायालय ऐसे आवेदन पर निर्णय देने के लिए बाध्य है इस प्रकार इस नियम में, जैसा कि स्पष्ट है, निर्णीत ऋणी के अलावा कोई भी व्यक्ति शामिल है। नियम 101 निर्धारित किए जाने वाले प्रश्नों से संबंधित है। इसमें यह प्रावधान है कि अधिकार, स्वामित्व या हित से संबंधित प्रश्नों सहित सभी प्रश्न जो नियम 97 या नियम 99 के तहत किसी आवेदन पर विचार करने वाले न्यायालय द्वारा निर्धारित किया जाता है न कि एक अलग मुकदमा और उक्त उद्देश्य के लिए, निष्पादन न्यायालय को इसे तय करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है। नियम 100 बेदखली की शिकायत करने वाले आवेदन पर पारित किए जाने वाले आदेशों से संबंधित है। उक्त को पुनः प्रस्तुत करना उपयुक्त है।

नियमः

" नियम 100 बेदखली के आवेदन पर पारित करने का आदेश नियम 101 में निर्दिष्ट प्रश्नों में से न्यायालय,ऐसे निर्धारण के अनुसार, आवेदन की अनुमति देने के लिए आदेश दें और

(अ) निर्देश देने का आदेश देगा कि आवेदक को सम्पति का कब्जा दे दिया जावे या आवेदन को खारिज कर दिया जाये; या ऐसी परिस्थितियों में आदेश पारित करें जो

(ख) मामला,की परिस्थितयों में समझता हो यह उचित लग सकता है। "

14. नियम 98 निर्णय के बाद के आदेशों से संबंधित है। उप-नियम 1 में प्रावधान है कि 101 में निर्दिष्ट प्रश्न के निर्धारण पर न्यायालय निर्धारण के अनुसार और उप नियम 2 के प्रवधानों के अधिीन आवेदन को स्वीकार करने का आदेशर दे सकता है और आवेदक को सम्पति का कब्जा देने का आदेश दे सकता है। या आवेदन को खारिज करना या ऐसा अन्य आदेश पारित करना, जैसा कि मामले की परिस्थितियों में उचित लग सकता है। जहाँ तक उप-नियम (2) का सवाल है। वर्तमान प्रयोजनों के लिए ध्यान देना आवश्यक नहीं है

नियम 103 जो महत्वपूर्ण है वह इस प्रकार हैः " नियम 103। आदेशों को ड्रिकी के रूप में माना जाना चाहिए। - जहां नियम 98 या नियम 100,के तहत किसी भी आवेदन पर निर्णय लिया गया है। उस पर किए गए आदेश में वही होगा बल होगा और अपील या अन्यथा जैसे कि यह एक डिक्री थी। एक के रूप में एक ही शर्तों के अधीन होना

15.अपीलक्ताओं के लिए विद्वान वकील की दलील है कि यदि उक्त नियमों में अंतर्निहित योजना है कि कार्यवाही की बहुलता से बचने के लिए विधायिका ने अधिकार दिया है निष्पादन न्यायालय को अधिकार दिया गया है कि वह आवश्यक जांच करने और पक्षकारों को मौखिक और दस्तावेज दोनों तरह से साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति देकर निर्णय लेने के लिए दस्तावेजी, और पक्षों के अधिकार, स्वामित्व एवं हित को निर्धारित करने के लिए और इसलिए, इस तरह के आदेश को डिक्री का दर्जा दिया

गया है जैसा कि उनके द्वारा प्रस्तुत किया गया है, नियम 97 या नियम 99 के सदर्भ में एक कार्यवाही में एक वाद की प्रकृति में हैं और निर्णय एक वाद के समान है और जब मामले में हाथ में है, तो न्यायालय ने उस पर कार्यवाही को शुरू करने से इनकार कर दिया है किसी भी जांच में जवाब के लिए बुलाना, साक्ष्य दर्ज करना और विवाद का उचित रूप से न्यायनिर्णयन करते हुए पारित आदेश नहीं हो सकता है। आदेश XXI के नियम 103 के तहत एक डिक्री के रूप में माना जाता है। इसमें संदर्भ में, जिन अधिकारियों की हमें सराहना की गई है, उन पर सावधानीपूर्वक ध्यान देने की आवश्यकता है।

16. नूरदुद्दीन बनाम डॉ. के. एल. आनंद, निष्पादन न्यायालय ने अपीलार्थी के आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया था कि उच्च न्यायालय पहले ही याचिका पर निर्णय दे चुका था। नियम 97,98 और 100 से 104 में प्रयुक्त भाषा का विश्लेषण करते हुए न्यायालय ने कहाः

" इस प्रकार, संहिता की योजना स्पष्ट रूप से बताती है कि जब आदेश 21, नियम 97 के तहत आवेदन किया गया है, तो न्यायालय को किसी कार्यवाही के पक्षकारों के बीच या डिक्री-धारक और उसके बीच उत्पन्न होने वाली संपत्ति में दावा किए गए अधिकार, स्वामित्व और हित पर निर्णय देने का आदेश दिया गया है। डिक्री धारक और अचंल सम्पति में स्वतंत्र अधिकार,स्वामित्व या हित का दावा करने वाला व्यक्ति और उस संबंध में एक आदेश दिया जायेगा निर्णय पक्षों के बीच निर्णायक

होगा जैसे कि यह अपील के अधिकार के अधीन एक डिक्री थी और एक अलग मुकदमे द्वारा उत्तेजित होने वाला मामला नहीं था। दूसरे शब्दों में, कोई अन्य कार्यवाही की अनुमति नहीं दी गई थी। यह याद रखना होगा कि पूर्ववर्ती सिविल प्रक्रिया संहिता संशोधन अधिनियम, 1976 के आदेश 21 के तहत वाद का अधिकार, 1908 संहिता का नियम 103 के तहत वाद का अधिकार उपलब्ध था जिसे अब छिन लिया गया है।ले जाया गया। आवश्यक निहितार्थ से, विधायिका ने निष्पादन के तहत अचल संपत्ति में अधिकार और शीर्षक या हित के निर्णय के लिये पार्टियों को पीछे छोड दिया और इसे अंतिम रूप दे दिया गया है। इस प्रकार, संहिता की योजना प्रतित होती है निष्पादन की देखी को समाप्त करें और निष्पादन में अंचल सम्पति पर अधिकार, स्वामित्व और हित का दावा करने वाले पक्षों या व्यक्तियों के बीच मुकदमेबाजी को कम करें।

आगे स्पष्ट करते हुए, न्यायालय ने कहा कि फांसी से पहले निर्णय धोखाधडी, उत्पीडन, अदालत की प्रक्रिया का दुरुपयोग या गर्भपात को रोकने के लिए एक प्रभारी उपाय है। 5. (1995) 1 एससीसी 242।

कानून का उद्देश्य न्याय को पूरा करना है और इसलिए,आदेश XXI, नियम 98,100 और 101 इसके क्रमिक नियम के तहत निर्णय अचल संपत्ति में अधिकार, स्वामित्व या हित के लिये अनिवार्य है। निष्पादन।

17. बाबुलाल में! (ऊपर), अपीलार्थी को यह आशंका थी कि निष्पादन कार्यवाही में बेदखल किया जाएगा उसने मालिकाना हक के

आधार पर एक आवेदन दायर किया था और अंतरिम निषेधाज्ञा प्राप्त कि थी उन्होंने एक आवेदन भी दायर किया था, जिसमें कहा गया था, कि उसे बेदखल नहीं किया जाना चाहिए। उनकी आपत्ति थी निष्पादन अदालत ने यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि चूंकि उसे बेदखल नहीं किया जाना चाहिए आदेश XXI, नियम 98 के तहत एक आवेदन सुनवाई योग्य नहीं था। उक्त दृष्टिकोण की पुष्टि उच्च न्यायालय ने सिविल संशोधन याचिका में की थी। न्यायालय ने व्याख्या करते हुए आदेश XXI, नियम 98 से 102 में भंवर लाल बनाम सत्यनारायण वगै. में निर्णय का उल्लेख किया गया है। ने कहा कि यह स्पष्ट है कि आदेश 21 नियम 98 को हटाने से पहले एक निर्णय आयोजित किया जाना आवश्यक है। आक्षेपकर्ता या अपीलार्थी द्वारा उत्पन्न बाधा और उस संबंध में एक निष्कर्ष दर्ज किया जाना आवश्यक है। अदालत ने फैसला सुनाया कि आदेश का आदेश XXI, नियम 103 के तहत एक डिक्री के रूप में माना जाता है और यह अपील के अधीन है । उक्त मामले में यह देखा गया है कि 1976 से पहले, आदेश वाद के अधीन था, लेकिन संशोधित संहिता के तहत, अधिकार आदेश XXI, पुरानी संहिता के नियम 63 के तहत वाद का अधिकार,छीन लिया गया और प्रश्न का निर्धारण किया गया शीर्षक या अधिकार के प्रश्न निष्पादन के तहत अचल संपत्ति में आक्षेपकर्ता का हित आदेश XXI, नियम 98 के तहत निर्णय लेने की आवश्यकता है। जो एक आदेश है और आदेश XXI, नियम 103 के तहत एक डिक्री है जो समान शर्तों के अधीन अपील के उद्देश्य के लिए है एक अपील या अन्यथा जैसे कि यह एक डिक्री थी।

अदालत ने आगे कहा राय दी कि निर्धारित प्रक्रिया एक पूर्ण संहिता है और इसलिए, निष्पादन न्यायालय को प्रश्न का निर्धारण करने की आवश्यकता है।

18. घासी राम और अन्य में (ऊपर) एक बनाते समय संशोधन से पहले के प्रावधानों के बीच अंतर 1976 में सी. पी. सी. में लाया गया संशोधन और उसके बाद की स्थिति पर दो-न्यायाधीशों की पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी कीः

"1976 के संशोधन अधिनियम द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता में संशोधन के बाद स्थिति बदल गई है। अब, संशोधित प्रावधानों के तहत, नियम 97 के तहत कार्यवाही के पक्षों के बीच उत्पन्न होने वाली संपत्ति में अधिकार, स्वामित्व, हित सहित सभी प्रश्न निष्पादन न्यायालय द्वारा स्वयं निर्णय लिया गया और नए मुकदमें के माध्यम से निर्णय लेने के लिए नहीं छोडा जाना चाहिए।

19. एस. राजेश्वरी (ऊपर) के मामले में, अपीलार्थी उन व्यक्तियों में से था जिसने प्रथम प्रतिवादी द्वारा प्राप्त डिक्री के निष्पादन में बाधा डाली थी और सी. पी. सी. की धारा 151 के तहत एक आवेदन दायर किया गया था जिसे अस्वीकार कर दिया गया था निष्पादन न्यायालय द्वारा इस आधार पर कि यह सुनवाई योग्य नहीं है। उक्त आदेश से दुखी होकर उन्होंने एक पुनरीक्षण याचिका दायर जिसे उच्च न्यायालय ने अनुमति दी थी। न्यायालय ने धारा 151 cpc के तहत दिए गए आवेदन पर विचार

किया। सी. पी. सी. आदेश XXI, नियम 97 के तहत एक होगा क्योंकि निष्पादन अदालत साक्ष्य दर्ज करने के लिए आगे बढ़ी और उसके बाद मामले का फैसला किया। डिक्री-धारक के साक्ष्य पर विचार किया गया और एक निष्कर्ष पर पहुंचा कि की पहचान विचाराधीन भूखंड स्थापित नहीं किया गया था और इस प्रकार वादी को कब्जे के लिए डिक्री को निष्पादित करने से अक्षम कर दिया गया था भूमि से। इस न्यायालय के समक्ष एक तर्क उठाया गया था कि उच्च न्यायालय ने धारा 115 सीपीसी के तहत एक पुनरीक्षण याचिका पर विचार करने में गलती की थी के आदेश XXI, नियम 103 के तहत एक डिक्री थी और इसलिए, एक अपील की गई थी। इस न्यायालय ने तर्क को स्वीकार कर लिया था।

20. इस समय पर, हम लाभ के साथ ब्रह्मदेव चोधरी बनाम ऋषिकेश प्रसाद जायसवाल और एक अन्य मामले की घोषणा का संदर्भ ले सकते है जिसमें नियमों की संरचना की जांच करने वाली दो न्यायाधीशों की पीठ ने यह निष्कर्ष निकाला था कि डिक्री के लिए एक अजनबी जो डिक्रीटल सम्पति में एक स्वतंत्र अधिकार, स्वामित्व और में हित का दावा करता है वह वास्तव में बेदखल होने से पहले प्रतिरोध पेश कर सकता है समान रूप से अपनी शिकायत को उत्तेजित करें और निर्णय के लिए दावा करें उसका स्वतंत्र अधिकार, उपाधि और डिक्रिटल में रुचि आदेश XXI नियम 99 के अनुसार कब्जा खोने के बाद भी संपत्ति,नियम 99. आदेश XXI, नियम 97 एक ऐसे चरण से संबंधित है जो है कब्जा के लिए डिक्री

के वास्तविक निष्पादन से पहले जिसमें बाधा डालने वाले की शिकायत हो सकती है कब्जा के वास्तविक वितरण से पहले निर्णय लिया गया डिक्री धारक। जबकि आदेश XXI, दूसरी ओर नियम 99 हाथ निष्पादन में बाद के चरण से संबंधित है ऐसी कार्यवाही जहाँ कोई अजनबी किसी अधिकार, अधिकार और अधिकार का दावा करता है। अचल संपत्ति में ब्याज वास्तव में मिल सकता है बेदखल किया गया और कब्जे की बहाली का दावा किया गया उसके स्वतंत्र अधिकार, उपाधि और हित का निर्णय निर्णय-देनदार के ब्याज को कम करता है। ये दोनों अधिकार, शीर्षक और संबंध में पूछताछ के प्रकार डिक्री के लिए एक अजनबी का हित स्पष्ट रूप से है आदेश XXI की उपरोक्त योजना द्वारा अनुध्यात और ऐसा नहीं है कि आदेश के लिए ऐसा कोई अजनबी आ सकता है तस्वीर में केवल अंतिम चरण में हारने के बाद अधिकार और उसके सामने नहीं अगर वह उठाने के लिए पर्याप्त सतर्क है वारंट के समक्ष उसकी आपत्ति और बाधा कब्जा वास्तव में उसके खिलाफ निष्पादित किया जाता है।

21. उपरोक्त प्राधिकारियों ने स्पष्ट रूप से बताया कि अदालत के पास पक्षों के बीच उत्पन्न होने वाली संपत्ति में अधिकार, स्वामित्व या हित संबंधित सभी प्रश्नों पर निर्णय लेने का अधिकार है इसमें किसी अजनबी का दावा भी शामिल है जिसे अचल संपत्ति से बेदखल की आंशका है या पहले ही बेदखल कर दिया गया है। स्व-निहित संहिता, जैसा इस न्यायालय द्वारा जोर दिया गया है, निष्पादन न्यायालय को मुकदमें का

फैसला करने का आदेश देता है और इसका उद्देश्य कार्यवाही की बहुलता से बचना है। ऐसा इसलिए भी है क्योंकि 1976 के संशोधन से पहले शिकायत के लिये मुकदमा दायर करना आवश्यकता थी लेकिन संशोधन के बाद पूरी जांच द्वारा की जानी है निष्पादन न्यायालय। आदेश XXI, नियम 101 आवश्यक मुद्दों के निर्धारण के लिए प्रदान करता है। नियम 103 स्पष्ट रूप से निर्धारित करता है कि जब किसी आवेदन पर नियम 98 या नियम 100 के तहत निर्णय लिया जाता है तो उक्त आदेश का वही बल होगा जैसे कि यह एक डिक्री हो इस प्रकार, यह एक मानित फरमान है। यदि कोई न्यायालय इस आधार पर निर्णय देने से इनकार करता है कि उसके पास अधिकार क्षेत्र नहीं है, तो उक्त आदेश डिक्री का दर्जा प्राप्त नहीं कर सकता है। यदि कोई निष्पादन न्यायालय केवल यह कहकर निर्णय लेने में अपनी असमर्थता व्यक्त करता है कि उसके पास अधिकार क्षेत्र का अभाव है, तो आदेश की स्थिति अलग होनी चाहिए। मौजूदा मामले में निष्पादन अदालत ने एक राय व्यक्त की है कि यह कार्यात्मक अधिकारी बन गया है और इसलिए, यह कोई जांच शुरू नहीं कर सकता है याचिकाकर्ताओं ने कहा था कि संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश को लागू करता है। इस आधार पर कि यह अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने में विफल रहा था अपीलकर्ताओं ने सूर्य देव राय बनाम राम चंदर राय और अन्य। मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित आदेश के अनुसार उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया था। 22. क्या निष्पादन न्यायालय, ने प्राप्त करने में न्यायालय अपने

अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करता है जो कानून द्वारा उसमें निहित नहीं है या करने में विफल रहता है इस प्रकार निहित अधिकारिता का प्रयोग करें, धारा के तहत उक्त आदेश धारा 115 संहिता की समीक्षा की जा सकती है जैसा कि जॉय चंद लाल बाबू बनाम कमलाक्षा चौधरी और अन्य। में किया गया है। वैसा ही। केसरदेव चामरिया बनाम राधा किसान चामरिया और अन्य में सिद्धांत को दोहराया गया है। और चौबे जगदीश प्रसाद और अन्य बनाम गंगा प्रसाद चतुर्वेदी में दोहराया गया है

इस बात पर जोर दें कि उक्त सिद्धांत अच्छी तरह से स्थापित है। इसके बाद सी. पी. सी. की धारा 115 का संशोधन। 1.7.2002, उक्त शक्ति का प्रयोग संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत सूर्य देव राय (ऊपर) में निर्धारित सिद्धांत के अनुसार किया जाता है। निष्पादन न्यायालय के पास यह विचार व्यक्त करने के अलावा था कि उसने कार्य अधिकारी ने गुण-दोष के आधार पर मुद्दों का निर्णय लिया था,तो सवाल अलग होता, क्योंकि उस घटना में एक निर्णय होता।

23. जारी विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए, हम निष्कर्ष निकालते हैं और मानते हैं कि उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त करके गलती की है कि निष्पादन न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय एक डिक्री है और,इसलिए, एक अपील दायर की जानी चाहिए थी, और परिणामस्वरूप अपील की अनुमति दी जानी चाहिए और आक्षेपित आदेश को रद्द किया जाना चाहिए उच्च न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 227 के तहत आवश्यकतानुसार

मामले का फैसला करेगा। चूंकी लंबा समय बीत गया है इसलिये हम उच्च न्यायालय से अनुरोध करेंगे कि वे इस मामले का निपटारा करें। तीन महीने की अवधि। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

सना खान आर.जे.एस.

महानगर मजिस्ट्रेट क्रम संख्या 10

जयपुर महानगर द्वितीय

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक सना खान (न्यायिक अधिकारी) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः- यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंगेे्रजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।